झुलसा हुआ मै

(कविता सग्रह)

झुलसा हुआ मैं

निशान्त

स्वस्ति साहित्य सदन
रानी बाजार, बीकानेर 334001

निशान्त

प्रकाशक स्वस्ति साहित्य सदन, रानी बाजार बीकानेर 334001/
मुद्रक एस० एन० प्रिंटस नवीन शाहदरा, दिल्ली 110032 /
संस्करण प्रथम 1983 / आवरण सनू / मूल्य बीस
रुपये मात्र।

JHULSA HUA MEN (Pomes) NISHANT
Price 20/-

प्रस्तुति से पूर्व एक पाठकीय साक्ष्य

लघु पत्रिकाओ के माध्यम से लम्बे समय स मैं कवि निशान्त से परिचित रहा हू, सीधे साक्षात्कार से पूव उनका आग्रह मुझ तक पहुचा कि मैं उनके पहले काव्य सग्रह का पहला पाठक बनू, उनका यह आग्रह मुझे बहुत निकट का तो लगा ही और इस अथ म साधक भी कि काव्य-कम स निरन्तर जुडे रहने का अथ निरन्तर कविता पढते रहने स भी है।

लघु पत्रिकाओ म दखा हुआ उनका छायाभास सग्रह के साथ अपने समग्र रूप मे मेरे सामने है, डेढ दशक की उनकी काव्य यात्रा को उसके बाहर भीतर सहित देखने की मैंने चेष्टा की है—

"आकाश जैसा था / वैसा ही रहा / वे इसमे कोई /
सुनहरा रग नही भर पाए लेकिन "
"मुझे उन सब चेहरो का पता है / जहा वसत नहा है "
"शेर उनकी जात है / और बकरी उनकी औकात /
लेकिन उन्होन सदा ही / अपनी औकात को भुलाया है /
जात को बचाया है "
"मुट्ठिया तन कर खुल जाती है "
"और फूट पडता है होठो का एक छाला '
"मैं कोठरी म स खिडकी बना लूगा "

पर्याप्त है य कविता पक्तिया कि मैं यह कहू कि निशान्त इतने सहज कवि हैं कि शिल्प उनके यहा कोई बहुत बडा अथ नही रखता, इस कारण उनस कही कही कविता की लय भी छूट गई सी लगती है पर इस छूटने मे उनके हाथ जो लगा वह भारी है, 'वह' के भार को दखते हुए कविता की लय और उसकी दिशा को एक बारगी तो अलग रखा ही जा सकता है यह वह' उनकी भाषा है जिसे निशान्त कस्बई गलियो कृषा खेता की पगडडियो और निम्न मध्यवित्तीय परिवेश के बोलते हुए आगन से उठाया है, उनकी भाषा महानगर को जानती है पर उसकी भागम भाग से बोझिल नही हुई है, वह अपने रचनाकार के साथ उससे सन्त्रस्त भी नही हुई है कि दखे और कतरा जाए या फिर भाग छूटने के असफल जतन करे।

निशान्त की कविता की भाषा अपने आप मे एक प्रमाण है कि रचनाकार रचना के माध्यम से अपने परिवेश से सरोकार बनाए रखने की चिंता मे है, रचना उसके लिए 'कला' और 'सौदय' बाद म है, पहले, वह उसकी, उसके अपने परि-

वेश की जो उससे, उस जस समूह से बना है और व सारे ऊर्जा के द्र भी उसी म निहित हैं जो उसे गति देत है--आकुलता की, व्यक्त होने की बेचैनी की 'वाणी' है।

यह सुख की बात है कि निशान्त ने वायवीय धारणा के दबाव से उपजी अपनी प्रतिक्रिया को मात्र आवेग के शब्दो मे नही उछाला है कही थका है तो स्वीकार भी किया है। कस्बई सस्कारो न अभी तक अपन प्राजल भाषा स्वरूप को पूरी तरह नही छोडा है, निशान्त भी उ ही सस्कारो के अशी है, कही कही वह प्राजलता भी आई है पर वह गलिया छोटी सडका धक्का बस्तिया कच्चे मकान स निकली भाषा मे खपी नही है।

भाषा का यह रचना रूप पाठक को आश्वस्त करता है कि यह भाषा अपनी रचनात्मक क्षमताओ का विस्तार देन की दिशा म निरी आकुलता क साथ प्रयत्नशील है। परिवेश से मिलनी पीडा और क्षोभ ने रचनाकार को 'कोरे आदश, पढते रहने से तो अलग किया ही है अपने आज को देखते छानत, उसकी आवश्य कता की ही जुबान म अनागत को आकारने का सपना भी दिया है।

मैं श्री निशान्त के इस सग्रह को अपनत्व दता हुआ कामना करता हू कि काव्य-यात्रा का उनका अगला पडाव इस भाषा रूप के सहारे नए रचनात्मक आयाम दन वाला होगा।

मुझे रचनाकार ने पहला पाठक होने का अवसर दिया, उनके इस अप-नत्व के प्रति मेरी शुभेच्छा।

—हरीश भादानी

अनुक्रम

भूत, भविष्य और वर्तमान

अतीत के वे दिन
जिन्हें मैंने
दुर्दिन के चिह्न से
चिह्नित कर दिया था
भयकर वतमान से तमाचे खाकर
आज मैं उन्हें
सुदिनों की सज्ञा दे रहा हू
इससे स्पष्ट है
भविष्य और भी घना
अधकारमय होगा
और मुझे फिर अपने इस
आज के वतमान के प्रति अपनी
धारणा बदलनी पडेगी
इससे एक शिक्षा भी है
कि आज के इस वर्तमान को
चाहे वह यथाथ मे कसा ही है
एक सुनहरा अवसर मान लू
और इस सत्य को पहचान लू
कि कही भी चला जाऊ, चाहे
मुझे हमेशा एक
सीमाहीन भीड घेरे रहेगी
और एक शून्य से अधिक
कुछ नही होगा
मेरा अस्तित्व

ऐसे म अच्छा ही है
अगर मुझको नही होता
अपनी असफलताओ
पर अफसोस ।
और हृदय मे
धडकन की जगह
अगर बचा हुआ है
मात्र एक अहसास ।

क्षमता सिकुडन और विस्तार

घर म पड़े पड़े
मेरे भीतर
एक बवडर उठता है
दुनिया के कुछ
रग बटोर लेने का
और मैं पूरी शक्ति से
बाहर निकल पडता हू
अभी नुक्कड तक ही आ पाता हू
कि सारा उत्साह
ठण्डा पड जाता है
और आंखो म
जो कुछ बसा था
सब लुप्त हो जाता है !
दिखाई देती है
सिफ एक पनवाडी की दुकान !
ऐसे म अकस्मात
मुझ पर कोई हसता है
"बस इतनी ही है तुम्हारी ताक्त ?"
पनवाडी से एक सिगरेट पीता हू
और मुझे लगता है
यही है बस मेरी
सबसे बडी उपलब्धि !
इतने बीते दिनो को मैंने
जिया नही है
कीडा की तरह—माटी किया है

और आग भी इसी तरह
न जाने कितने दिन !
तभी मेरे इर्द गिर्द
एक भीड़ उगती है
एक ऐसी भीड़
जिसकी झोलों में
एक भी सपना नहीं
और जेब में एक भी उपलब्धि !
जिसमें आग
भावों भूख
बर्फ की तरह नंगी होकर
नाच रही है बेताल
मिला लम्बी
चौड़ा ! चौड़ी !
लेकिन भीतर का शैतान
इस सानिध्य से प्राप्त
सुख को भी
भोगने नहीं देता अधिक देर
वह आकर मुझे फिर दिखा देता है
किसी के
मंजिल की ओर बढ़ते
खटा ख ट
करते पाव
सुख के पीत होंठ !
जिन्हें देख मेरी नींद उड़ जाती है
और मैं दौड़ने लगता हूं—शहर के बाहर
खुली सड़कों पर
ताकि इस भीड़ को छोड़ कर
एक और भीड़ में जा सकूं !

आदमी

उनके लिए आदमी
यह आदमी नहीं होता जो
एक जोडी आँखें, एक जोडी हाथ
और एक जोडी पाँव रखता है
जिसके घर बीवी बच्चे होते हैं
बुड्ढे मा बाप होते हैं
जिसके ब्याहने लायक बहन होती है
जो बीमार बेकार और लाचार होता है
जिसके आवास की समस्या है
रोटी की समस्या है
जो सारे दिन खपता है
जिसे डाकुओं का भय सताता है
जिसके दुश्मन हैं—मित्र हैं
उनके लिए चाहे कोई धना सेठ है
या गगू तेली
चाहे कोई शोषण करता है या करवाता है
चाहे लेखक है या वक्ता
इसकी उन्हें कोई पहचान नहीं है
उनके लिए तो आदमी—एक मुर्गी है
जो हर पाँच साल बाद
उनके लिए एक
सोने का अंडा देती है
कभी-कभी यह अंडा वे इस मुर्गी से
पाँच साल से पहले भी
गिरवा लेते हैं !

मैंने देखा है

इस व्यवस्था को चलाने की
जिम्मेवारी
हम जिन कन्धों पर
डालते रहे हैं
उनमें यहाँ मैंने देखा है
शेर और बकरी
दोनों दूषित हैं
ढकें भी क्या न ?
शेर उनकी जात है
और बकरी उनकी औकात
लेकिन उन्होंने सदा ही
अपनी औकात को
भुलाया है
जात को बचाया है।

यह अस्वस्थ हवा

हर सुबह
अगली सुबह सी नही होती
हर क्षण
नया दद उग आता है
गीत कैसे गाए ?
और फिर इन पक्तियो म
कितना हृदय रीतता है !
एक पल ही तो बीतता है
बडी अजीब बात है
कायरत रहते हुए भी
मैं शक्ति हो उठना हू
इसकी उपयोगिता पर
और थकावट से नही
यू ही अपने को
बोझिल सा महसूसता हू !
यू तो घटती ही रहती हैं
घटनाए दुघटनाए
पर एक कडवी मन स्थिति
जीवन बनने पर ही तुल आई है
दिनचर्या के सिवाय
दोष निणय जो रेंगते हैं
मस्तिष्क मे

उठे पूरा करने की अपना
स्थगित कर गया हूं
छुट्टियां तमाम गुज़र जाती हैं
गम हुआ रहा
ठंडा पड़ जाता है अपना आप
नन्त्रागार में
न जा सका जो गम तो
भूलता बीयर-बार में
यहां-वहां फसती है
स्वस्थ हुआ
मुझे कुछ याद नहीं
लू में
झुलसा हुआ मैं
बन्द कमरे में
अंतिम अहसास की
कल्पना किए जा रहा हूं
अब मेरे अन्दर
न नेपोलियन जीवित है
न गांधी
आंखों के हवाई किले भी
मैंने
कच्ची उमर तक ही बनाए थे
अगर कुछ परिस्थितियां
करा ही दें मुझे
स्वस्थ हवाओं से
जल्दी लौट आने का अहसास
तो बीच ही में आ ही जाती है
अस्थाई नौकरी
बुड्ढे माता पिता
छोटा भाई
जिसकी छूट गई पढ़ाई
वक्त जो भद्देपन में बीता
या सुख जो छूट गए
या बीसा पन जिनके

जवाब नही आए
और फूट पडता है
होठो का एक छाला
जिससे फैल जाता है
कडवा तरल सारे मुह मे
इसी तरह यह अस्वस्थ हवा
रुक कर भी नही रुकती

एक और महाप्रलय

न बता सपन था तो
एक बहाना मात्र है
वैसे मुझे साफ-साफ पता है
यह मेरा भविष्य था
जो मुझे यहां बदल गया है
जहां मुझे लगता है
शारदीय सोनल धूप बिखेरता सूरज भी
गर्द के बादलों में छुपा है,
चलता फिरता हूं
फिर भी लगता है
पशु हूं
यह कैसी प्रलय है ?
तमाम बस्तियां, पृथ्वी
और नर-नारी
फु ऽऽऽऽर से
कहीं उड़ गए हैं
है तो बस
अनिश्चय की सीटियां बजाता हुआ
हवाओं का खालीपन
दिशाहीन आकाश
और जगह-जगह उमड़ते
घुटन, खीझ, अतृप्ति
और असंतोष के बादल
जिनसे बरसता है
हर वक्त

आदमी को तडपा देने वाला—जल
वैसे इस प्रलय मे
सब जगह जल ही जल न होकर
हो गया है
कीचड ही कीचड
जो मेरे गले तक आ गया है
जिसमे मैं
मारता हुआ हाथ पैर
जाता हू
कभी इधर, कभी उधर।
इस सब मे भी
हाय। मैं टूटा नही हू
शायद मुझ मे नव सृष्टि का
प्रथम मानव बनने की लालसा
मरी नही है
हा।
वैसे यह ठीक भी है
मनु को भी
यू ही डराने लगा था एक दिन
हवाओ का खालीपन
दिशाहीन आकाश
परन्तु वह टूटा नही था
तभी तो कहला गया
सृष्टि का प्रथम मानव
तो क्या मुझे भी
इडा और श्रद्धा मिलेगी
हा। हा।
क्या इस प्रलय के बाद भी
नव सृष्टि खिलेगी ?

किसी एक दिन

अन्त तक
यू ही नोचता रहेगा
छाती को विषाद
मस्तिष्क की शक्ति की
अन्तिम इकाइयो को
यू ही खाती रहेगी
सौ सौ चिन्ताए!
और किसी एक दिन मैं
चलने लग्गा यहा से
यू ही
करने के लिए
बहुत कुछ छोड कर
क्या कर जाऊगा मै?
दुहरा जाऊगा
असफलता और बेबसी की
कई-कई कहानिया,
इस समयावधि मे
युग के इतिहास का
एक और पष्ठ बढेगा
लेकिन ऐसा क्या है?
जो अपने योगदान का भी आभास देगा!
फिर भी मन को अगर
हो गया यह स्वीकार
कि आदमी की शक्ति
इतनी ही होती है

तो मेरा मरणासन
सुखान्त होगा
नही तो एक
लम्बी कृतज्ञ बेहोशी ही आएगी काम
निकालने के लिए प्राण,
उस दिन
मेरा आगन कुछ देर के लिए
होगा उदास
सब से अधिक दु ख होगा
इस कैक्टस को
ये बबूल के पत्ते बेचारे
करेंगे
लाश को ढाप लेने का
असफल सा प्रयास !
क्या सीखेगा कोई
मेरी इस मृत्यु से ?
मैंने भी तो कभी कुछ नही सीखा
(लाशा के ढेरो से)
इसके डर से मैंने
कब रखे है जल्दी-जल्दी पाव
कब छोड़ा है मैंने
खाना-पीना-सोना
और प्यार को तलाशना
पसीना ही पसीना बहाया है
कहां बहाया है, खून !
कितने दिन रहे हैं
मेरे साधारण !
मेरे बाद भी
यू ही आती रहेगी
हर आकाशवाणी से
युद्ध की खबरें,
यू ही दिन उगगा
और लोगो के पेट में दद।
सूय यू ही डूबेगा

लिए संग हर आस्था या मन ।
रातें यूं ही लम्बी होंगी
लोग पीते रहेंगे
शराब
या खाते रहेंगे
एल० अस० डी० की गोलियां
झुठलाते रहेंगे
अपने होने के सत्य को
कोई नपुंसक
बेचता फिरेगा
अपनी बीवी या बहन को
होटलों में ।
गिनाने में कहां पूरा आऊंगा
प्यारा और खारा
सब कुछ ही चलता रहेगा
मरण की तैयारी करता रहेगा ।

मैं खुद ही
या सनीचर
कौन था जिसने मुझे आज तक
सिर्फ सपने ही सपने दिखाए
और लाकर पटक दिया
बेकारी और बीमारी के कीचड़ में
लेकिन मैं किसी से
कुछ भी नहीं कहूंगा
चुपचाप सब सहूंगा
कहने का समय भी कहां है ?
समय तो है उनका
जो छपवा रहे हैं घोषणा-पत्र
जो उछाल रहे हैं आश्वासन
या उनके लिए
जिनके लिए जीवन है
सिर्फ बोटी और कोठी
और उन लोगों का भी
जिनके लिए जरूरी था
हमारा पराजित हो जाना ।

यही चाहिए था

यही चाहिए था मेरे लिए
यू ही लटकना बीच मे
और रेंगना कीच मे
कुछ न कुछ तो सजा मिलनी ही
चाहिए थी
दीन हीन होते हुए भी
प्रेमी, महान और धनवान बनने का
सपना देखने की
यथाशक्ति प्रयास करने की
मैं ही तो था वह
जिसे डर था
जल्दी बहुत जल्दी
सारे रास्ते खुल जाने का
सारे अभाव धुल जाने का

मेरे बचाव के लिए
कोई नही आता
रिश्ते मेरे लिए नही
रिश्तो के लिए
मैं हूं
बाप बल्लम लेकर
मारने को दौडता है
माँ चुप रहती है
हिऽऽऽऽऽस !
बेटे से मा को
इतना डर लगता है
रात को नौ बजने पर
जब आकाशवाणी कहती है
'अब सामाचार समाप्त हुए'
तब मैं बडबडाता हू
'नही, नही,
अभी एक खबर और !'
लेकिन मेरी आवाज शून्य मे
विलीन हो जाती है
और मैं पेट मे
जगह जगह
गाठें ही गाठें महसूसता हू
उस सूत की
जो कि मैं दिन भर
कातता हू !

स्वभाव

जरूरी नही है कि
हर ऊची दूकान मे
फीका पक्वान हो
और हर नीची दूकान मे
मीठा पकवान हो
लेकिन मैं फिर भी
हर बार ही
नीची दूकान पर जाता हू
क्योकि मुझे पता है
यह किसी अघाये हुए आदमी की
दूकान नही है।

खेल ! मेरे बेटे ! खेल !

खेल ! मेरे बेटे ! खेल !
टूटी हुई चम्मच
और फूटी हुई थाली से खेल !
चहकती चिड़िया से बहला अपना मन
तेरे खिलौने तो
चुरा ले गए
मकान मालिक के बच्चे !
खेल ! मेरे बेटे ! खेल !
भूखे पेट ही खेल
तेरा दूध पी गए
मुझे नौकरी दिलाने का
झांसा देने वाले बिचोलिए
सीख ! मेरे बच्चे ! सीख !
तिनको के सहारे चलना सीख !
तेरा 'रेहड़ू' तो
खिसक गया मेरी जेब से
टिकट खरीदते वक्त
मुसाफिरखाने की भीड़ मे
खेल !

यह नहीं चलेगा

इस तरह
कितने दिन चलेगा प्यारे
कि हम अपनी रचनाओ मे तो
मूल्यो की
महत्ता झाडें
और उन्ह अपनी व्यक्तिगत
जिन्दगी म न उतारें
यह नही चलेगा प्यारे
कि हम अपनी रचनाए तो
जनता से जोडें
और जनता म स्वय जुडन के नाम पर
नाक भौं सिकोडें ।

आजकल

व धे
जिन्होने
उचका उचका कर उ हे
इतना ऊचा उठाया
और ससद मे ले जा बिठाया
वे आजकल
असहाय से
झूल रहे हैं
सपने जो जगाए थे उन्हाने
भूल रहे हैं ।

एक बार फिर

बाहर तो निकलते हैं
और उडते भी हैं
शाति के कपोत
मुक्ति प्रिय चिडिया
लेकिन एक बार फिर इन्हे
कही दूर
आकाश मे उड रही
चीलो का भय
सताने लगा है
यह ठीक है कि
पिछली बार
आकाश जैसा था
वैसा ही रहा
वे इसमे कोई
सुनहरा रग नही भर पाये
लेकिन इन शाति कपोतो
और मुक्ति प्रिय चिडियो को
ऊचे कही उड रही
चीलो का तो
आभास मात्र ही नही था।

एक बार फिर

बाहर तो निकलते है
और उडते भी हैं
शाति के कपोत
मुक्ति प्रिय चिडिया
लेकिन एक बार फिर इन्हें
कही दूर
आकाश मे उड रही
चीलो का भय
सताने लगा है
यह ठीक है कि
पिछली बार
आकाश जैसा था
वैसा ही रहा
वे इसमे कोई
सुनहरा रग नही भर पाये
लेकिन इन शाति कपोतो
और मुक्ति प्रिय चिडियो को
ऊचे कहीं उड रही
चीलो का तो
आभास मात्र ही नहीं था।

बचत-बीज

गाँव में
पढ़ाई पर मुझे भेजते
मेरे बाप ने पढ़ाया लिखाया मुझे
इस उम्मीद में कि एक दिन
यह तो कायदे से बड़ा हो जाएगा
लेकिन शहर में आकर
नौकरी लगी तो बहुत से लोग
मेरी कमाई में से भी
कुछ हिस्सा बटाने लगे
और मेरे पास
गाँव में पैसा भेजने
माँ-बाप के पास भेजने के लिए
बचा
मात्र इतना सा संतोष
कि मैं—उनका बेटा
सरकारी नौकरी में हूँ
[illegible] [illegible] [illegible] [illegible]
[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] भी
[illegible] [illegible]
[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] है ?

नन्हे मजूर

छोटे छोटे बच्चे
बडे बडे काम करते हैं
लेकिन वे उन्हे
पैसे बहुत थोडे देते हैं
ऐसे ही एक बच्चे को
जब मैंने टोका कि
तुम्हारा मेहनताना बहुत थोडा है
तो वह तपाक से बोला—
ज्यादा लालच अच्छा नही होता
ऐसी बातें उन्हे कौन सिखाता है
ऐसी बातें उन्हें
उनसे काम लेने वाले सिखाते हैं
और उनके बाप
इस सफेद झूठ पर
सत्य की मुहर चिपकाते है
जो उनकी कमाई को
ऊपर की कमाई मानकर
बडे मजे से दारू मे
लुटाते हैं।

एक भूमिहीन की व्यथा

इतनी बड़ी धरती पर
कोई खेत नहीं मेरा
जिसमें मैं
बो दूं कुछ दाने
और उग पड़े
लहलहाती
फसल
बिन इस कर
सिमटा रह गया
भूखा मन
लेकिन सुना है
इस देश में
चौधरी, ठाकुर
और सेठों के
कुत्ते, बिल्ली
और चिड़ियों के नाम भी
खेत हैं !

फिर वही

फिर वही पोस्टर
वही झण्डे
वही आश्वासन
पार्टिया
गठजोड
वही रस्सा कस्सी
वही का वही है
सब कुछ
सिवाय
कुछ लोगो के
जो इस घिनौने सिलसिले
के विरोध मे
लगा रहे हैं आवाजें लगातार

लोगो की तीन हसजताएँ

आधुनिकता
दोस्त
रेस्तरा
खच खूब
ग्राहको के आगे
थोडा और
बोल जाएगे
झूठ

कपट
तनाव
थकावट
उदासी
अब
थोडी सी
मिल जाए शराब तो
मजा ही मजा है
खूब !

रात
धातुक्षय
सुबह आलस्य
उबासिया
चाय का प्याला पीकर
जवान होती
पीढियाँ

होने की विवशता

हर वक्त
सम्भावनाओ रा बडा सा द्वार
वही मैं
इस अंधेरी राह मे
कहा खो गया हू !
हाय, मैं महानगर हो गया हूँ !

एक चित्र

आकाश मे

सारे आकाश मे
भर गया
रेन की नीद के बाद का पानी ।
जिस म
तैरता है सूरज
बिना दिखाई दिए ।
हम धरती के लोग
कसे जिए ?

यह सब

तैंतीस वर्षों से
समूचे देश पर
कुंडली मारे बैठा है
एक परिवार
और दिना-दिन
अधिक मजबूत होती जा रही है
उसकी पकड
इसीलिए कई कमजोर दिल वाले
राजनीतिज्ञ
अलगाव मे ही ढूंढने लगे हैं
अपना भविष्य
इस देश की जनता भी
क्या खूब है
सिर्फ एक बार को छोड़कर
उन्होने काटी है सदा ही
एक ही पार्टी की फसल
जबकि वे खूब जानते हैं
एक ही एक फसल
लगातार बोने से
धरती किस तरह से
बाझ होती चली जाती है
और कम होता चला जाता है
उत्तरोत्तर फसल का झाड !
किस कदर उल्टा पडा है
यह लोकतन्त्री मौसम कि

वसत

फूलो !
बढ़ती उमर के कई चेहरो ! !
और
और भी बहुत सी जगह है
वहाँ वसत है
मेरी उमर और स्थिति
देखते हुए
मेरे पास भी
वसत होना चाहिए
लेकिन नही है
इसकी वजह
केवल एक ही है
कि मुझे उन सब
चेहरो का पता है
जहा वसत नही है
और वे चेहरे
मेरे बहुत निकट है।

विडम्बना और विडम्बना

भूख
और निराशा के मारे
इस देश के लोगों को
मरने और जीने में
कोई भेद नज़र नहीं आता
लेकिन इस देश का
जो भी प्रधानमंत्री बनता है
लोगों के
जीवन की सुरक्षा चाहता है
सिर्फ
विश्व शांति के लिए
निरस्त्रीकरण
या
परमाणु नहीं के
नारे लगाता है !

निम्न तबके की बस्ती

गाव के बाहर
झुग्गियो वाली बस्ती
रहती है सारा दिन उदास ।
काम करने लायक मद
पहुच जाते हैं भोर ही म
भूपतियो के खेतो मे
औरतें और बच्चिया उठाती फिरती हैं
सवर्णों के घर गोबर
या फिर चुगती है मजदूरी पर
खेतो मे कपास ।
श्वास कास के मरीज
बुड्ढे बुढिढया खटिया म पडे
उगलते है सारा दिन कफ
करते हैं फिक्र
लोगो के खेत घर गयी
जवान बहु बेटियो की
सुवह से शाम तक सब जी खपते हैं
फिर भी कज नही छोडता पिण्ड
दिन फिर जाने की
नही जरा भी आस ।
बस्ती रहती है। सारा दिन उदास ।

आस्था

अजूबा

हरिजन
भूमिहीन मजूर मुजारो के वास म
हो रहा है सत्सग
लोग कर रह है—दया धम
त्याग तपस्या
आत्म सुधार की बातें
उधर कइ धनिक किसान पीकर शराब
कर रह हैं चितन—
फला मजूर मुजारे की
बेटी या बहू को
कैसे फासा जाए ?
सहसा उनकी छत पर
बोलती है कोचरी
शराबी चौधरी करता है
अपनी दुनाली से एक फायर
और सन्नाटा छा जाता है
सारे वातावरण पर
कितना अजीब है
जिनकी अहिंसा
दया धम से
कुछ अथ निकलने वाला है।
वे तो इह अपना नहीं रहे हैं
और दूसरे फोकट मे
इन बाता पर
मत्था खपा रहे हैं।

तुम्हारे भले तो

तुम्हारे भले तो
लगे हमें अच्छी है तानाशाही
हां भाई !
जिस तन लागे वो तन जाने
दूजा क्या जाने पीर पराई
तुम्हारी नहीं हुई
अभी मरम्मत
न तुम्हारे घर की
किसी ने दीवार गिराई

धक्का बस्ती

पट्टे वाली ज़मीन पर
(जो खरीदी न जा सकी)
पक्के मकान का
खाका दबा पडा रह गया
मेरे कागजा मे
और मैंने कस्बे की
धक्का बस्ती मे
अपना एक कच्चा घर
बना लिया है
फिलहाल
पत्नी को मैंने समझा दिया है
कि चलो हमने
पट्टे वाली ज़मीन पर
एक पक्के मकान का
सपना तो देख लिया
अधिकाश लोग तो
यह सपना भी नही देख सकते
जब बना रहा था
धक्का बस्ती मे
यह घर तो
हो रहा था अफसोस
कि रगीन बस्ती ने
धकेल दिया मुझे
इस उजाड म
जहा न रोशनी है न पानी

उस सरकारी बुलडोजर को
वापस खदेड़ने म
जो आएगा एक न एक दिन
इस बस्ती को उजाड़न, लेकिन
उपजती कहा है लागा मे
इतनी सरलता से
इतनी बशर्मी और
इतनी ताकत
फिर यहा डर भी तो है
कच्ची गलिया का
अधेरे का
प्यास का
चोरो का
वर्षा ऋतु मे पानी भर जाने का भी
इतन डर आदमी
उस दिन ही लाघेगा
जिस दिन उसके सिर पर से
पानी गुज़र जाएगा
ठीक मेरी तरह
उस दिन उस
यह धक्का बस्ती
उबार लेगी

कच्चा घर वर्षा के बाद

नया साल

कुछ भी तो नया नही होता
नये साल मे
न तो कुर्ता ही नया होता है
और न ही जूता
कुछ भी तो नही बदलता
सिवाय एक्र कलेण्डर के
वही रहता है पेशा
वही अफसर होते हैं
और वडी मातहत
न तो सत्तासीन वदलते हैं
और न ही परजा
वैसे का वैसा ही रहता है
मौसम ।

भ्रांति कथा

'अ' दिल्ली म रहता है
लागा मे दूर
लोगो को उमके आय के स्त्रोत
ज्ञात नही हो सकते
वह आमानी से उनके आगे
गरीव बन सकता है
लेकिन लोगा से
'अ' के उन समथका की
(जो मत्री बनते हैं / सासद
विधायक बनते हैं)
आय के स्त्रोत तो छुपे हुए नही हैं
ये तो उनके ही बीच रहते हैं
अधिकाश लोगा ने तो
ताजमहल को भी मात करती
इनकी कोठी को
अपने हाथा मे बनाया सजाया है
कितनो ने ही इनके
मील भर लम्बे चौडे फाम म
काम किया है
जिसमे फल और फसलें
दोनो ही भरपूर होती हैं
लोग यह भी जानते हैं कि
इन सब की शहरो मे दूकानें हैं
मिलें हैं
फिर भी 'अ' जब

भूखे मरते / गले सड़े /
फटी आँखों वाले
और उनके चारों पर । जिनके
मसखरे से आदमियों के आगे
यह भाषण देता है कि
मैं तुम्हारी गरीबी दूर कर दूंगा
तो लोग क्यूं
सहज में ही
उस पर विश्वास कर लेते हैं ?
वे उस से क्यूं नहीं
पूछते कि
इस वाक्य को सुनकर
कभी तुम्हारा यह अमीर समाज
चौंका क्यूं नहीं ?
यह वाक्य सुनकर
इनके चेहरे पर
हवाईयां की जगह
खुशियां क्यों उड़ती हैं ?
क्या हमारी गरीबी दूर करने के लिए
आप सारा माल मत्ता
आपस में बांटोगे ?

अस्तित्व पूर्ण मैं

कैस मान लूँ
कि मैं हूँ अस्तित्वहीन
इतने बडे ब्रह्माड म
एक है मेरी धरती
धरती के कई देशा म है
मेरा एक दश
एक दश के कई प्राता मे है
मेरा एक प्रात
प्रात के कई जिला म है
मेरा एक जिला
और जिले के कई गावा मे
मेरा एक गाव
जिसम मेरे नाम का
व्यक्ति सिफ मैं ही हूँ
यह भी कैम मान लू
कि मृत्यु के बाद
कुछ भी नही बचेगा मेरा
अगर यह धरती रही तो
कुछ न कुछ खशबू
बची ही रह जाएगी
जिस मैं बिखेर जाऊगा
मरी इम जिन्दगी मे।

गुस्से का कारण

घर में जब मुन्ना
अंडा तोड़ देता है
या मुन्नी टमाटर फोड़ देती है
तो मेरे गुस्से में
आग बबूला होने का कारण
सिर्फ अंडे-टमाटर का
नुकसान ही नहीं होता
उनके पीछे होती है
मेरे हर जगह हारने
पर आने की
खीझ।

राम

राम वहाँ नहीं है
जहाँ आकर तुम
घंटियाँ खड़खड़ाते हो
राम था वहाँ
जहाँ कुछ अत्याचारियों के विरुद्ध
समूचा शहर उमड़ पड़ा था
कईयों ने
इस अत्याचार के विरोध में
बिछाया था स्वयं को
राम आदमी में ही है
राम से भी तो तुम
यही चाहते हो कि दूध का दूध
और पानी का पानी हो
तो इसी / जतन में / सदियों से
लगा है आदमी
जिसका नतीजा है—
हमारे ये थाने तहसील
यायालय सर्वोच्च यायालय
और यू० एन० ओ०
यह ठीक है कि
आदमियों द्वारा निर्मित
इन संस्थाओं में चूक हो जाती है
लेकिन यह चूक सिर्फ
इसीलिए होती है कि
अभी तक । प्रत्येक आदमी ने
अपने राम को जगाया नहीं है
और जगा भी लिया है तो
रावण के विरुद्ध खड़ा किया नहीं है ।

निष्ठा

तुम मुझ
एक को गोली से उडाओगे
तो दस और
उठ खडे होगें मेरे प्रतिरूप
उन दस को तुम
फासी पर लटकाओगे
तो उन प्रत्यक के पीछे
दस दस और सीना तान लेंग
आखिरकार तुम तो
हक्के बक्के रह जाओगे
जब मुझे मार दिए जाने पर भी
मुझ जैसे हजारा
तुम्हे
ललकार रहे होगे !

खलकत जाग जाएगी तो

यथा स्थिति बनाए रखने वालो से

मैं अगर
किसी सिरफिरे की तरह यह कहूँ
कि आप
पाच साल तक
पूरी तरह चुप रहे
जब तक की लाजमी न हो
कोई आन्दोलन न करें
सत्तासीनो के खिलाफ
तो आप नही मानेगें
क्योकि आप को भी तो
आगे आना
अपने आप को चमकाना है
लेकिन दरसल आप
एसा करके उन्ह
एक मौका और देंगे
लोगा की हमदर्दी लूटने का
और यह कहने का कि
हमे कुछ करन ही नही दिया गया
जब कि कुछ भी करने की
मशा उनकी स्वय की ही नही है ।

अस्सी की उपलब्धि

सो ! और बजाओ रेडियो
सुनो फिल्मी गीत कमेंट्री
फर्क नहीं पड़ेगी तुम्हें
अब दो बंद तरह की बात
तुम्हारे जीवन में संगीत नहीं तो क्या
रेडियो में तो है
उसे ही पीओ
तुम्हें खेलना नसीब नहीं होगा तो क्या
कमेंट्री सुनो
और बातें करो खिलाड़ियों की
सुनने वालों पर
तुम्हारे व्यक्तित्व की
धाक पड़ेगी।
(भले ही आप सारा दिन
सड़क नापते हैं)
दूसरे क्या
अहम् बात तो यह है कि
आप क्रिकेट के प्रत्येक खिलाड़ी का
नाम जानते हैं
क्या जरूरत है
देश के राजनैतिक सामाजिक
और आर्थिक मुद्दों पर सिर खपाने की
आप उस सरकार को/धन्यवाद क्यों नहीं दे रहे हैं।
जिसने तुम्हारे रेडियो को
इतना हल्का कर दिया है।

गजब हो जाता

बालकनी म
गली म फकी गयी
उस रोटी को उठान म
अगर वह लडका
एक पल भी लेट हो जाना
ता गजब हो जाता
उम झपट ले जाना
एक सूअर
और आदमी के उम बच्चे को
अलडिया
न जान कितनी दर तक
कुल चुनाती रहती
आहार क लिए !

अंध-भक्ति

किसी समय
मेरे देश में
साठ करोड़
देवी-देवता थे
लेकिन आज
इस विशाल देश में
सम्भवत
एक ही देवी रह गयी है
अंध भक्ति की भी यारो
कोई हद होती है।

समझदारी

तुम कहते हो कि
पढ़े लिखे भी
उनके 'फेवर' मे जा रहे है
लेकिन कौन से पढ़े लिखे ?
जिन्होने उनके द्वारा पढाई गयी
किताब के सिवाय
दूसरी के हाथ ही नही लगाया
इसलिए
यह मत कहो कि
समझदारी झक मरा रही है
देखो ! वह
धीरे धीरे आ रही है !

अब और उत्साह

काफी चल लिए कागजों पर
आओ अब थोड़ा
रेत पर भी चलें
बहुत लिया है
साक्षात्कार और परिचय
किताबों से
आओ अब थोड़ा
लोगों से भी
हिलें ! मिलें !

लोगो ने

लोग जब सुख सुविधाओ के लिए
चिल्लाते हैं
तो तुम्हारा जबाव हाता है—
हमारे पास कोई
जादू की छडी नहा है
(वैस यह बात तो तुम भी
स्वीकारते होगे कि
तुम्हारे पास
अपने लिए
तमाम ऐशो आराम जुटा लेने की
जादू की छडी अवश्य है।)
लेकिन लोगा का
तुम्हारा यह जबाव सन्तोष नही देता
उन्हे विश्वास है कि
तुम्हारे पास
जादू की छडी जरूर है
तुम उसे प्रयोग म
नही ला रहे हो
इसलिए लोगा ने
तुम्हारे सुख क्षेत्रो म
बारूदी सुरगें बिछा दी ह ।

भ्रम और बदनियत का भ्रूण

उसके पेट में
भ्रम और बदनियति का भ्रूण पल रहा था
लेकिन जीवन में परिवर्तित
होने से पहले ही, अवतरित हो गया/
इस पर वह एक बार सहम गई थी
उसके प्रतिद्वंद्वी अगर चाहते तो
उसके पेट में घुसकर –
इस भ्रूण पलने की
सारी सम्भावनाएं काट सकते थे
लेकिन उन्होंने ऐसा नहीं किया
तो वह एक बार फिर –
इस भ्रूण की मां हो गया है।
और उनकी (अपने प्रतिद्वंद्वियों की)
विशाल हृदयता को
नपुंसकता की संज्ञा दे रही है
और गलत लोगों के बीच/अपने चेहरे को
अधिक से अधिक/चमका रही है।
मेरे देश के लोग भी क्या खूब हैं
उन्हें सारी सम्भावनाएं
एक ही में/क्यों नजर आती हैं?
क्या देश को साफ करते जाते हैं।

पालन

सध्या के समय
गवालों की भेडें
घर लौटते हुए
मिमिया रही हैं
जसे स्कूली बच्चे
समन्वित स्वर म
वणमाला का
उच्चरण कर रहे हा
गेहू और सरमा की
फूटली हुइ
कोंपला पर
इस जानलेवा पतझड के पार
मैं साफ साफ
देख रहा हू
एक मुस्कराता हुआ
वसत !
सचमुच
परवरिश
कितनी बडी
चीज है !



जन्म 1949

डेढ़ दशक से लेखन

प्रारम्भ तो कविताओं से ही

फिर कहानी रिपोर्ताज

संस्मरण

लघु उपन्यास

और बालकथाएं कविताएं भी

रचनाकर्मी श्री जनकराज पारीक

के सान्निध्य से

लघु पत्रिकाओं से जुड़ाव

अनेकानेक रचनाओं का प्रकाशन

बाल रचना की एक पुस्तक के बाद

पहला कविता संग्रह

"झुलसा हुआ मैं"

साहित्य के माध्यम से

समाज से सरोकार को

गहरा करते रहने का यत्न

शिक्षा विभाग, राजस्थान में

अध्यापन कार्य

सम्पर्क

द्वारा बसन्तलाल हेमराज

पीलीबंगा—335803 (श्रीगंगानगर)